27 अप्रैल, 2010 को 1500 बजे 6, तीस जनवरी मार्ग, नई दिल्ली में राष्ट्रीय रक्षा महाविद्यालय के स्वर्ण जयन्ती समारोह में भारत के माननीय उपराष्ट्रपति श्री मो. हामिद अंसारी का अभिभाषण

आज राष्ट्रीय रक्षा महाविद्यालय (एन डी सी) के स्वर्ण जयन्ती स्मारक समारोह में आप सभी के बीच उपस्थित होकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। पांच दशकों के सतत् कार्य की बदौलत आज इस महाविद्यालय ने विश्व भर में अपने समकक्ष महाविद्यालयों में प्रतिष्ठा और सम्मान हासिल किया है।

एन डी सी की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य वरिष्ठ रक्षा सेवा और सिविल अधिकारियों को 'युद्ध संबंधी उच्चतर निदेश और रणनीति के व्यापक पहलुओं' पर प्रशिक्षण देना था। यह सामाजिक व्यवस्था के प्रमुख उद्देश्य, अर्थात् सुरक्षा सुनिश्चित करने और इसकी चुनौतियों का सामना करने की क्षमता विकसित करने के विभिन्न आयामों को एकीकृत करने के समग्र प्रयास का प्रतिनिधित्व करता है।

इन संकल्पनाओं के अर्थ एवं विषय वस्तु में समय और मानव प्रगति के साथ परिवर्तन हुआ है। आज सुरक्षा को मानव सुरक्षा के रूप में देखा जाता है। इसमें राष्ट्र की सुरक्षा के पारंपरिक दायरे से हटकर पर्यावरणीय सुरक्षा, संसाधन सुरक्षा, सतत् विकास, मूलभूत सुविधाएं, सुशासन, सामाजिक न्याय और मानवाधिकार शामिल हैं। आज युद्ध का भी अर्थ रणनीतिक पाठ्यपुस्तकों या अंतर्राष्ट्रीय कानून में बताए गए अर्थ से भिन्न है। अंतर्ध्रुवीयता, मिश्रित युद्ध तथा अंत: संयोजित (नेटवर्क्ड)

शत्रु जैसी संकल्पनाओं का महत्व बढ़ गया है और ये रणनीतियों और चालों को पुन: नया रूप दे रहे हैं।

इन धारणाओं के सामूहिक प्रभाव से पारंपरिक रूपावली कमजोर हुई है और इससे संकल्पनाओं और पद्धतियों की व्यापक समीक्षा आवश्यक हो जाती है। ऐसे दृष्टिकोण से खंडित सोच की गुंजाइश समाप्त हो जाती है।

अत: रणनीति-निर्माता के समक्ष चुनौती नहीं दिखने वाले पहलुओं के बारे में सोचने, असंभाव्य और शायद असंभव के बारे में भी विचार करने की है। कोई सुनामी, वैश्विक संकट, कोई महामारी, कोई वैश्विक वित्तीय संकट, इस महीने के आरंभ में आइसलैंड में हुआ ज्वालामुखी विस्फोट ऐसी चुनौतियां हैं, जिनका राष्ट्रीय योजना-निर्माताओं को पारंपरिक चुनौतियों के अलावा सामना करना है। इनमें से प्रत्येक के लिए अंतर-एजेन्सी योजना और कार्यान्वयन की आवश्यकता होगी

यहां पर एनडीसी जैसी संस्थाओं का महत्व है, जहां ज्ञान और अनुभव के एकजुट होने का आशय व्यापक सुरक्षा के प्रश्नों पर प्रकाश डालना और नीतिगत विकल्प तैयार करना है।

इतना ही महत्वपूर्ण है पाठ्यक्रम के "उच्चतर निदेश" वाले पहलू और प्रबंधन एवं नेतृत्व का प्रश्न। ये किसी भी संगठन में सफलता के लिए महतवपूर्ण हैं। कैप्टन लीडेल हार्ट, जो पिछले दौर के एक रणनीतिक विचारक थे, ने अपने एक लेखांश में जो कहा है, वह मेरी नजर में आज भी प्रासंगिक है। मैं वह बात आपको भी बताना चाहता हूँ। हो सकता है, आप इससे सहमत हों अथवा नहीं भी हो:

भूत और वर्तमान के इतिहास का अध्ययन करने से पता चलता है कि मानव जाति की अधिकांश समस्याएं मानव-जनित हैं, बिना जानकारी के लिए गए निर्णयों से, ऐसी महत्वाकांक्षाओं से, जो विवेक से नियंत्रित नहीं हैं और ऐसे न्याय से उत्पन्न होती हैं जिसमें समझ की कमी हो ......वे लोग जो ज्ञान की बदौलत अधिकारपूर्ण स्थिति में पहुँचते हैं, प्रायः ऐसे प्रश्नों पर निर्णय लेते हैं, जो उनके ज्ञान के परे हैं। अपने अधिकार को बनाए रखने की महत्वाकांक्षा उन्हें अपने ज्ञान की सीमाओं को मानने और अन्य लोगों के पास उपलब्ध ज्ञान से लाभ उठाने से भी रोकती है।

देवियो और सज्जनो,

पिछले दो दशकों के घटनाक्रम ने विश्व को और राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हमारी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की विधि को बदल कर रख दिया है। शीतयुद्ध की समाप्ति, नई प्रौद्योगिकियों के आगमन, वैश्वीकरण के प्रभाव, वैश्विक राजनीति में राज्य की संप्रभुता के स्थान पर बहस ने सामूहिक रूप से विभिन्न परिणामों में 1990 से पूर्व के विश्व की नींव को हिलाकर रखा दिया है।

इसके अलावा विज्ञान के क्षितिज के निरंतर हमारे समीप आने से जीनोम-विज्ञान और तंत्रिका विज्ञान की तस्वीर बिल्कुल बदल गई है जिससे मानव स्वभाव को नई परिभाषा मिली है जिससे कुछ सक्षम प्रेक्षक यह संभावना जता रहे हैं कि मानव "अपने उस स्वभाव में परिवर्तन लाने और उसे नया रूप देने की प्रीमिथस संबंधी शक्ति" हासिल करेगा।

इसी के मद्देनजर हमारे समक्ष दो अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होते हैं: "आज खतरे का स्वरूप क्या है? वे घटनाएं और हमारे अपने कार्यों से हुए परिवर्तनों के

प्रभाव का सामना करने के लिए हम राष्ट्रीय और अंतराष्ट्रीय रूप से कितने तैयार हैं?" पहले प्रश्न के उत्तर का हमारी असुरक्षा बोध के साथ अभिन्न संबंध है। पारंपरिक राजनीति-सैन्य खतरों से इतर, एक संयुक्त एवं निष्पक्ष समाज का निर्माण करने के लिए राष्ट्रीय विकास में आने वाली किसी भी बाधा को खतरा माना जाएगा। वर्षों पहले यू.एन.डी.पी. द्वारा मानव सुरक्षा के आयामों को परिभाषित किया गया था। अभी हाल ही में, इण्डिया सोशल डेवलपमेंट रिपोर्ट, 2005 में भारत-विशिष्ट मूल्यांकन करने के लिए छ: लक्षणों का उपयोग किया गया है। इनमें से कुछ के संशोधक घरेलू क्षेत्र में निहित हैं जबकि कुछ अन्य के सुधारक उपायों की प्रकृति क्षेत्रीय अथवा वैश्विक है और व्यापक सहयोग से ही इसका समाधान किया जा सकता है।

इसके गंभीर मूल्यांकन से पता चलेगा कि राष्ट्रीय इच्छाशक्ति और राष्ट्रीय क्षमता पर क्षेत्रीय (सब-नेशनल)एवं अंतर्राष्ट्रीय (सुप्रा-नेशनल) कारकों का प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। जैसा कि प्रोफेसर बैरी बुजन ने समुक्ति की है, "पुरानी सुरक्षा कार्य-सूची की अपेक्षा नई सुरक्षा कार्य-सूची में राज्य कम महत्वपूर्ण है। अब भी यह इसका केन्द्र बिन्दु है, परंतु अब न तो अनन्य रूप से संदर्भित वस्तु के रूप में अथवा न ही खतरे के मुख्य मूर्त रूप में इसकी प्रभावकारिता है।"

इसे कैसे प्राप्त किया जाए? इसमें क्या-क्या कठिनाइयां हैं?

पहली चुनौती ऐसी कार्य पद्धतियां तैयार करने की है जिसके द्वारा राज्य राष्ट्रीय विधियों अथवा बहुराष्ट्रीय प्रसंविदाओं की बाध्यताओं के भीतर रहते हुए प्रभावी तरीके से कार्य कर सके। यह इसलिए संभव है क्योंकि सामूहिक हित के प्रति

बढ़ते अंतर्राष्ट्रीय खतरों को लेकर सामूहिक प्रतिक्रियाएं मिल रही हैं। जागरूकता में हुई वृद्धि से भी सहायता मिली है। असमान गति होने के बावजूद रुझान स्पष्ट है।

दूसरी चुनौती यह है कि यद्यपि सुरक्षा प्रदान करने वाले मुख्य रूप से स्टेट एक्टर्स हैं, तथापि राज्यों की सुरक्षा संबंधी खतरे उत्तरोत्तर संप्रभु क्षेत्र से नॉन स्टेट, सब-स्टेट या ट्रांस स्टेट एक्टरों की ओर रुख कर रहे हैं। प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों और त्वरित संचार एवं परिवहन ऐसे नॉन स्टेट एक्टरों के लिए शक्तिवर्द्धक बन गए हैं। ऐसे खतरों से निपटने के लिए स्टेट एक्टरों के पास उपलब्ध उपायों को तद्नुसार अनुकूल बनाने अथवा संशोधित किए जाने की आवश्यकता है क्योंकि पारंपरिक भयोत्पादक रूप सेलुलर संगठनों और उनकी नीति-निर्धारक संरचनाओं के सामने प्रभावकारी नहीं भी हो सकते हैं।

तीसरी चुनौती यह है कि वैचारिक और अनुभव-जन्य आधार पर यह स्वीकार करना महत्वपूर्ण है कि राज्यों की सुरक्षा और समाजों की सुरक्षा अनिवार्यत: पर्यायवाची नहीं है क्योंकि ऐसे स्टेट एक्टर्स हो सकते जो सुशासन के स्वीकृत मानदंडों को न अपनाते हों जिससे असुरक्षा उत्पन्न होगी। इससे अंतराक्षेपण के सिद्धांतों का प्रादुर्भाव होता है। इसके अवलंबन से मामले उलझ जाते हैं और प्रभावित समाजों को अनकही मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। नैनो औषधि का ऐसा सामाजिक अथवा राजनीतिक रूपान्तर, जो सिर्फ किसी बीमार उत्तक और रोगाणुओं को दूर करता है और स्वस्थ उत्तक को आनुषंगिक क्षति से बचा लेता है, अभी तक सामने नहीं आया है।

अंततः, और इस सदी के प्रथम दशक के अनुभव को ध्यान में रखते हुए जो "बहु-ध्रुवीय" विश्व उभर रहा है उसकी तरलता में अवसरों के साथ-साथ जोखिम भी शामिल हैं और इसीलिए सावधानीपूर्वक चलने की आवश्यकता है।

मित्रो,

2009-2010 के लिए रक्षा मंत्रालय के वार्षिक प्रतिवेदन के अनुसार, "विश्व के बहुत कम देश सुरक्षा संबंधी चिंताओं की ऐसी विविधता का सामना कर रहे हैं जिसका सामना आज भारत कर रहा है।" आंतरिक एवं बाह्य दोनों स्तरों पर इन चिंताओं को दूर करना, अभी भी सर्वोच्च प्राथमिकता का विषय है। राष्ट्रीय रक्षा महाविद्यालय जैसी संस्थाएं इस राष्ट्रीय प्रयास में अपना योगदान दे रही हैं। हमारे बढ़ते जटिल वैश्विक वातावरण में राष्ट्रीय सुरक्षा के आयामों के सुनियोजित अध्ययन के लिए राष्ट्रीय रक्षा महाविद्यालय प्रशंसा का पात्र है। यहां से उत्तीर्ण हुए अधिकारियों ने इसमें अच्छा खासा योगदान किया है। इस महाविद्यालय का अपने पूर्व-छात्रों पर गर्व करना यथोचित है।

मुझे विश्वास है कि राष्ट्रीय रक्षा महाविद्यालय के अगले पचास वर्ष उतने ही उपयोगी होंगे। मैं इस महाविद्यालय, इसके संकाय एवं कर्मचारिवृन्द तथा सभी अधिकारियों को उनके प्रयास में सफलता की सामना करता हूं और मैं ले. जेनरल प्रकाश मेनन को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने मुझे इस समारोह में आमंत्रित किया।